प्रस्तावना : Preface

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है, समाज की बहुमुखी गतिविधियाँ मानव के अस्तित्व का मूल हैं । प्रत्येक क्षेत्र में जितना ज्ञान व पारंगत्व है, उससे अधिक पाने की लालसा ही मनुष्य मात्र का विकास है यही विकास मानव जाति को प्राणी जगत में विशिष्ट स्थान प्रदान करता है, मानव हृदय की लालसा ही विकास की ओर ले जानेवाला प्रथम सोपान है, प्रत्येक क्षेत्र के प्रति व्याकुलता ही उसे उस पथ पर आने का कारण बनती है, वो पथ चाहे कला की ओर ही क्यों ना हो ?

वस्तुतः कला जीवन का विनम्र सौन्दर्य है । तत्वज्ञानी "रास्किन" ने जहाँ कला को जीवन बताया है वहीं उन्होंने ये स्वीकार किया है कि प्रत्येक महान् कलाकार ईश्वर कृति के प्रति मानव के अहलाद् की अभिव्यक्ति है । कला का उद्देश्य जीवन के पूर्णत्व को प्रदान करना है । कलाएँ प्राणी मात्र के आनन्द का स्त्रोत हैं । संगीत तो वह उत्कृष्ट माध्यम है, जिसमें डूब कर व्यक्ति अपना सम्पूर्ण अस्तित्व ही भूल जाता है, भावों की अभिव्यक्ति के इस सशक्त माध्यम को माधुर्य के साथ समन्वय कर देने पर एक विशिष्ट रचना का निर्माण होता है जो संगीत है । संगीत प्रकृति की सर्वाधिक सुंदर रचना है, इस की उत्पत्ति के विषय में कोई प्रमाण नहीं मिलता है - प्राप्त ग्रन्थों में संगीत की उत्पत्ति से सम्बन्धित अलग-अलग धारणाएँ हमें मिलती हैं, इनमें कुछ धार्मिक हैं, कुछ मनोवैज्ञानिक हैं, कुछ प्रकृति से तो कुछ ज्ञानी संगीत का विकास स्वतः ही मानते हैं । धार्मिक दृष्टिकोण के अनुसार ब्रह्माजी ने संगीत का निर्माण किया व शिवजी को दिया शिवजी ने सरस्वतीजी को और सरस्वतीजी ने नारदजी को, नारदजी ने संगीत का प्रचार गांधर्वों किन्नरों आदि में । इस प्रकार संगीत का प्रचार हुआ ।

एक अन्य मतानुसार प्रकृति ही संगीत का माध्यम है । विभिन्न पशु-पक्षियों की ध्वनि को मंगल - अमंगल की सूचना मानता था । झरनों की झर-झर, वनों की मर-मर,

नदियों की कल-कल, सागर की तरंग ध्वनि इत्यादि में अतः प्रत्येक गति या प्रवाह में संगीत को गुंजायमान माना है ।

पाश्चात्य विद्वान फ्रायड के अनुसार संगीत का जन्म एक शिशु के समान ही हुआ। जिस प्रकार एक शिशु रोना, हँसना, चलना, बोलना व अन्य क्रियाएँ स्वतः ही सीखता है, उसी प्रकार मानव संगीत भी स्वतः ही सीखता है ।

दार्शनिक धारणा के अनुसार संगीत का जन्म ओऊम शब्द से हुआ । ओऊम शब्द अ, ऊ, म, इन तीन अक्षरों से निर्मित हुआ है, अ की उत्पत्ति सृष्टिकर्ता ब्रह्मा । ऊ - पालक - रक्षण अर्थात स्थिति शक्ति का प्रतीक विष्णु । म - महेश शक्ति के द्योतक ही तीनों शक्तियों का पुंज ही "त्रिमूर्ती" परमेश्वर है । "ओमकार ही प्रणव है, प्रणव अर्थात नादब्रह्म" । दार्शनिक धारणा के आधार पर वास्तव में ओऊम ही संगीत के जन्म का उपकरण है । इसी प्रकार संगीत की उत्पत्ति के विषय में अनेक मत हैं - हम यदि संगीत द्वारा भावाभिव्यक्ति के माध्यम की ओर आयें तो हम मुख्य रुप से संगीत की दो विधाएँ पाते हैं - शास्त्रीय संगीत एवम् लोक संगीत ।

शास्त्रीय संगीत में जहाँ एक तरफ स्वर, लय, ताल रागों के कठोर नियम आदि समझनें के लिए अथक परिश्रम करना पड़ता है वहीं लोक संगीत में ये स्वतः ही प्रकट हो जाते हैं । समझने व जानने के लिए परिश्रम की आवश्यकता नहीं होती वे भाव द्वारा अपने आप ही निर्मित होने लगते हैं - उदाहरणार्थ :- यदि किसी को हम "बिलावल राग" गाने को कहें, तो उसे सीखने, समझने, गाने में काफी समय लगेगा, किन्तु हम यहाँ पर (ॐ जय जगदीश) गाने की बात करें तो गाने के लिए साधारण जन को कुछ सीखने की आवश्यकता नहीं । ना सम, ना खाली, ना ताल की मात्रा - वो तो स्वतः ही राग "बिलावल" व "दीपचन्दी ताल" बंध कर अत्यन्त मनोहारी रुप में भक्ति के अथाह सागर में उतर कर उसे प्रस्तुत करेगा ।

साधारण शब्दों में कहा जाए तो शास्त्रीय संगीत शास्त्र के नियमानुसार पेश किया जाता है, उसमे स्वर राग एवम् ज्ञान पक्ष की प्रधानता रहती है, शास्त्रीय संगीत में सिद्धान्तों का पालन किया जाता है, शास्त्रीय संगीत में ज्ञान पक्ष व शास्त्रीयता पर विशेष व भाव पक्ष पर कम ध्यान दिया जाता है व लोक संगीत में शास्त्र पक्ष पर कम और भाव पक्ष पर विशेष ध्यान दिया जाता है । लोक संगीत में निरागस, निष्पाप सरलता एवं सहजता है । शास्त्रीय संगीत में साहित्य का महत्व सीमित है जबकि लोक संगीत में साहित्य या काव्य का बड़ा ही महत्व है । शास्त्रीय संगीत शिस्तबद्ध है - शास्त्रीय संगीत के साथ - साथ ही अपितु उससे पूर्व से ही जन साधारण की दैनन्दिनी में बसे संगीत का भण्डार समृद्ध होता ही रहा, इसे लोक संगीत के रुप में जाना जाता है । सच माना जाए तो संगीत के शिस्तबद्ध रुप की व्युत्पत्ति का उद्‌गम इसी बृहद और सर्वांगीण लोक संगीत में से लौकिक क्रियाओं को अपने में समावेश करके और लोकाचार में रस भरता संगीत लोक संगीत है । जिसकी विशालता का पार नहीं .....

*****